RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-03
March-2019
ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

साहित्य की दार्शनिक प्रासंगिकता

Dr.Ramesh Dahiya

M.a,M.phil(Hindi),M.ed, Lectruer Hindi at Gsss Karola(Gurugram) (India)

अनेक पशु–पक्षियों, जीव–जन्तुओं तथा मनुष्यों से संसार का निर्माण हुआ है। सभी मनुष्य संसार में अपने–अपने ढ़ग से जीवन–निर्वाह करते है। लेकिन सभी व्यक्ति में अपने–अपने स्तर पर भिन्नता है। सभी प्राणी अपने अस्तित्व को बनायें रखने के लिए संघर्ष करते रहते है। मनुष्य पशु की अपेक्षा श्रेष्ठ है क्योंकि उसमें सोच–विचार तथा चिंतन का विशेष गुण है और इसी गुण के कारण व अन्य जीवो से भिन्न है। अपनी बुद्धि के कारण ही मानव विश्व की अन्य वस्तुओं को देखकर उनके स्वरूप को जानने की चेष्टा करता है। "मनुष्य का बुद्धि की सहायता से युक्तिपूर्वक तत्वज्ञान प्राप्त करने को 'दर्शन' कहते है।

दर्शन के अन्तर्गत इन विषयों पर चिंतन करता है कि हम कौन है? कहां से आए है? इस दृश्यमान जगत का क्या स्वरूप है? जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए कौन–सा सुंदर साधन मार्ग है मनुष्य कैसे पैदा होता है? वह मरकर कहां चला जाता है? आत्मा क्या है? ईश्वर क्या है? आदि दुर्लभ विषयों पर चिंतन करता है। प्रत्येक व्यक्ति का अपना दर्शन होता है, इसी के अन्तर्गत वह अपना जीवन व्यतीत करता है। परन्तु उसका चिंतन व्यक्तिपरक होता है, समष्टिपरक नहीं। लेकिन कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते है जिनका चिंतन व्यक्तिपरक से उठकर समष्टिपरक हो जाता है। कबीर, सूर, तुलसी, दादूयाल, एज्जबदास, महात्मागांधी नेहरू अम्बेडकर, महर्षि विवेकानंद आदि ऐसे ही व्यक्ति है। दर्शनशास्त्र और जीवन का अटूट संबंध है। 'परम श्रेय' की खोज करना ही दोनों तत्वो का अभीष्ट है। उसी का सैद्धान्तिक रूप दर्शन है और व्यावहारिक रूप समाज दर्शन सामाजिक जीवन के विषय में विचार और चिंतन करके एक सिद्धान्त प्रतिपादित करता है।

भारत के सभी संत दार्शनिक थे लेकिन इन संतो का दर्शन समाज के लिए था न कि अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए। लगभग सभी संतो के काव्य में समष्टिगत दार्शनिक चेतना का स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। सभी संतो को हम दार्शनिक कवि कह सकते है। दर्शन के दो भेद है। – आस्तिक व नास्तिक। संतो ने नास्तिकता को अधिक महत्व दिया है। संतो ने ब्रह्म का नाम राम रखा है, लेकिन वह राम नहीं जो दशरथ पुत्र के रूप में प्रसिद्ध है। संतो का राम निर्गुण–निराकार है, रूप–स्वरूप से परे हे दृष्टि और दर्शन में भी अलक्ष्य है। हिन्दी के सभी संत अधात्मक पथ के प्रसन्न पथिक थे। संतो के सभ्य समाज में ईश्वर को लेकर अनेक विभुम फैले हुए थे। लोग अपने–अपने अनुसार ईश्वर की कल्पना करते है। फिर भी लोग धर्मान्ध होकर अपने–अपने धर्म के अनुरूप ही ईश्वर का अस्तित्व स्वीकार करते है।

"हम वासी इस देश के, जहां जाति बरन कुल नांहि।
हम वासी उस देश के, जहां बरन कुल नांहि।।
शब्द मिलावा होय रहा, देह मिलावा नाहिं।

यद्यपि संतो का लक्ष्य दर्शन को सुलझाना नही था और न हि अपने आपको दार्शनिक बनाना था। वस्तुतः दार्शनिक चिन्तन एक सूक्ष्म, निगूढ़ एवं जटिल प्रक्रिया है। सम्पूर्ण संत साहित्य दार्शनिकता से ओत–प्रोत है। यह सत्य है कि संत जगजीवनदास दार्शनिक नहीं थे और न हि उन्होने किसी दार्शनिक सिद्धान्त था पद्धति का प्रतिपादन किया। वे वास्तव में साधक और चिंतक थे ईश्वर को तर्क की कसौटी पर कसना उनका उद्देश्य न था उन्होने ने तो साधना की अनुभूति के आधार पर ईश्वर को ब्रह्मा राम गोपाल, अल्लाह आदि नामों से सुशोभित किया है। जैसे–जैसे विश्व एक आत्मा चैतन्य ईकाई होने की दिशा में बढ़ता जा रहा है और कला विज्ञान साहित्य एवं सामाजिक संबंधों के क्षेत्र में अपना एक निजि स्वरूप विकसित करने लगा है। ऐसे में दार्शनिकता का प्रश्न अधिक प्रबल और महत्वपूर्ण होने लगा है। क्या दार्शनिकता सदैव सार्वभौम नही रही है? निःसंदेह नहीं रही होगी। इसी प्रकार चीन, यूरोप, अमेरिका के भी दार्शनिकों ने एक ही जीवन तथा सता पर प्रकाश डाला है और साथ में सत्य के प्रति एक उदार दृष्टिकोण रखा है।

दर्शन : अर्थ और स्वरूप : दर्शन का शाब्दिक अर्थ है–देखना। 'दर्शन' शब्द 'दृश', धातु में ल्युट प्रत्यय लगने से बनता है, जिसका अर्थ है – जिसके द्वारा देखा जाए। दर्शन का व्युत्पतिपरक अर्थ है – दृश्यते अनेन इति दर्शनम, अर्थात् जिसके द्वारा देखा जाए। अतः हम कह सकते है कि स्थूल नेत्रों से स्थूल पदार्थों को देखना तथा सूक्ष्म नेत्रो से सूक्ष्म पदार्थ को जानना ही दर्शन है। दर्शन को शास्त्र भी कहा जाता है। अतः दर्शन वह विज्ञान या शास्त्र है जिसके द्वारा मनुष्य को होने वाले ज्ञान या बोध सब तत्वों के मूल, आत्मा, प्रकृति विश्व सृष्टि, नियमों विधानों, सिद्धांतो आदि का गम्भीर

RRIJM 2015, All Rights Reserved

अध्ययन, निरूपण और विवेचना होता है। अंग्रेजी में दर्शन को 'फिलास्पी' भी कहते है। यह शब्द ग्रीक भाषा का है जो शब्दों से बना है – फिलास+साफिया जिसमें फिलास का अर्थ प्रेम व अनुराग और साफिया का अर्थ विद्या है। जो व्यक्ति संसार में ईश्वर धार्मिक सामाजिक तत्वों की छानबीन करने के प्रयत्न में लगे रहते है उसे फिलॉसफर कहते है। प्रारम्भ में फिलासफी के अन्तर्गत विज्ञान भी आता था परन्तु अब विज्ञान को अलग कर दिया है। विज्ञान में तो विभिन्न विषयों के विशिष्ट् अध्ययन रहता है जबकि विभिन्न विज्ञानों द्वारा उद्भासित सत्यो का एकीकरण करना 'फिलॉस्पी' का विषय है। अतः ब्रह्माण्ड, जीव जगत तथा ईश्वर का विशिष्ट स्वरूप का अध्ययन विज्ञान में तथा सामान्य रूप का अध्ययन 'फिलास्पी' के अन्तर्गत किया जाता है।

हिन्दी साहित्य में आज दर्शन दो रूपों में प्रयुक्त होता है। इसका सामान्य अर्थ हो गया जीवन दृष्टि लेकिन एक विशेष एवं परम्परा से युक्त अर्थ भी सुरक्षित है। अतः साधारण शब्दों में हम कह सकते है कि वह शास्त्र जिसमें आत्मा, परमात्मा जीवन, जीव, जगत, धर्म, मोक्ष आदि का विवेचन करता है वह दर्शन है। संसार में प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी समाज, जाति और देश से जुड़ा होता है। प्रत्येक समाज की अपनी विशेषता होती है। उसके भाषा, रीति–रिवाज, रूढ़ियाँ, जीवन पद्धति सब में अलग–अलग विशेषता होती है। परन्तु जो मनीषी होता है वह इन विषयों से प्रभावित होकर अंतिम निष्कर्ष पर पहुँचता। उसका यह निष्कर्ष उसमें एक विशेष दृष्टि का निर्माण करते है। इस दृष्टि के अनुरूप वह संसार में स्थित प्रत्येक वस्तु पर चिंतन करता है। यही उसका दर्शन कहलाता है। इस प्रकार हम कह सकते है कि दर्शन निर्माण में समाज का पूरा हाथ है और समाज निर्माण में दर्शन का। दर्शन के संबंध में श्री अरविन्द का मत है – "दर्शन का कार्य ज्ञान के विभिन्न साधनों द्वारा उपलब्ध सामग्री को कुछ भी न छोड़ते हुए व्यवस्थित करना और उनको एक सत्य, एक सर्वोच्च सद्वस्तु से समुचित संबंध में रखना है।"[1]

डा॰ राधाकृष्णन् के मतानुसार – "वस्तुतः दर्शन एक ऐसा आध्यात्मिक ज्ञान है, जो आत्मा रूपी इन्द्रिय के समान सम्पूर्ण रूप में प्रकट होता है।"[2]

हिन्दी शब्दकोश मानता है कि जिसके द्वारा यथार्थ तत्व का ज्ञान होता है उसे दर्शन कहते है। दर्शन का लक्ष्य बड़ा विराट है। वह मानव को व्यापक घरातल प्रदान करता है। दर्शन ही हमें जीव, जगत, माया, मोक्ष, ब्रह्मा आदि के स्वरूपों का दर्शन कराता है। यह मनुष्य को संसार के बंधन से मुक्ति का मार्ग दिखाता है। इस प्रकार दर्शन भारतीय संस्कृति से अभिन्न रूप में जुड़ा हुआ है। दर्शन का मुख्य लक्ष्य तो आध्यात्मिक चेतना को परिपुष्ट करना है। दर्शन सभी धर्मों का सार है क्योंकि इसमें धर्म विशेष का आधार छिपा है। भारतीय साहित्य में दर्शन का अपना महत्व है। दर्शन के बिना साहित्य अधूरा और अपरिपक्व होता है। दर्शन और जीवन का संबंध अविभाज्य है शंकराचार्य ने भारतीय दर्शन के निम्न पक्ष बतायें है गुरू, ब्रह्मा जगत्, माया और मोक्ष। इन्ही तत्वो के आधार पर हम संत जगजीवनदास की दार्शनिक चेतना का वर्णन करेगें।

गुरू – संत साहित्य में गुरू का अत्याधिक महत्व है गुरू वह होता है जो अपने शिष्य के जीवन के अंधकार को दूर करके उसे नया जीवन प्रदान करता है। संसार में गुरू की महता और अपरिहार्यता निर्विवाद है। शिष्य को भगवान की प्राप्ति अपने गुरू की सहायता से ही होती है। इसलिए वह अनन्त महिमामण्डित है –

"सतगुरू की महिमा अनंत, अनंत किया उपकार
लोचन अनंत उधड़िया, अनंत दिखावण हार।"।[3]

इस प्रकार समस्त भारतीय जीवन में और वाड्मय में गुरू को अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है

ब्रह्मा – भागवत में कहा गया कि ज्ञानमय और अद्वय पराशक्ति को ज्ञानी ब्रह्मा, योगी परमात्मा और भक्त भगवान कहते है यथा

"वेदान्ति तत्तत्वविदस्तात्त्व यज्ज्ञानम हयम्
ब्रह्मोति परमात्मूति भगवानिति शब्द्यते।"[4]

ब्रह्मा का शाब्दिक अर्थ है बड़ा। 'ब्रह्मा शब्द की व्युत्पति 'व्रहं' धातु से हुई है जिसका अर्थ है मुक्त, नित्य, सर्वव्यापक। शंकराचार्य ने भी ब्रह्मा को सर्वव्यापक माना है। ब्रह्मा का उल्लेख उपनिषदों में भी मिलता है – "तदतेत, ब्रह्मा अपूर्वमन परम नन्तरम ब्रह्मा", ।[5]

अर्थात विश्व की उत्पति, गति, पालन, लय का कारण ब्रह्मा है। वह अद्वितीय और अपूर्व है। गीता में ब्रह्मा को निर्गुण कहा गया है। परमात्मा के सगुण व निर्गुण दोनों रूप सत्य है वह सबसे समाया है, वह महान से महान है और आत्मज्ञान द्वारा ही उसे प्राप्त किया जा सकता है।

जीव – लिंग पुराण में कहा गया है कि जो सब जगह व्याप्त है, और सबको अपने में ग्रहण कर लेती है तथा जिसकी सत्ता निरन्तर बनी रहती है उसे आत्मा कहते है। जब

[1] श्री अरविन्द, द रेनेसाँ इन इण्डिया, पृ॰ 72
[2] डा॰ राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन, पृ॰ 38
[3] डा॰ पारसनाथ तिवारी, साखी : सतगुरू महिमा, पृ॰ 137/13
[4] उद्धृत – डॉ॰ विश्वम्भरदयाल अवस्थी, गोस्वामी तुलसीदास, दर्शन और भक्ति, पृ॰ 16
[5] उद्धृत डॉ॰ कृष्णा रेणा, हिन्दी निर्गुण सन्तकाव्य : दर्शन और भक्ति, पृ॰ 36

RRIJM 2015, All Rights Reserved

यह आत्मा शरीर से संबंधित हो जाती है तब हम इसे जीव कहते है। उपनिषदों में वर्णित है कि जीवात्मा न पुरूष और न ही औरत और न ह ीवह नपुंसक है। वह जैसे शरीर में जाती है वैसी ही बन जाती है। दर्शन के अनुसार ब्रह्मा असीम, लेकिन जीव ससीम है। दार्शनिको ने बताया कि मनुष्य शरीर की संरचना पांच तत्वो से होती है। लेकिन अंत में ये पांच तत्व विलीन होकर शरीर को भी अपने अंदर समाहित कर लेते है। अर्थात् मिट्टी का बना शरीर मिट्टी में मिल जाता है।

जगत् :– जगत का अर्थ है गमनशील, गच्छति इति जगत।[6] जगत पृथ्वी का वह अंश है जिसमें प्राणी या जीव चलते–फिरते है। भारतीय दर्शन में जगत के स्वरूप का विस्तार से विवेचन किया है। जगत की उत्पति, निर्माण आदि का पूरा विवेचन वेदों, उपनिषदों पुराणों तथा मनुस्मृति में मिलता है। संतो ने भारतीय संस्कृति के अनुरूप जगत की विवेचना की है।

माया :– माया का सर्वप्रथम प्रयोग 'ऋग्वेद' में मिलता है। ऋग्वेद के अनुसार इन्द्र अपनी क्षमता से एवं अपनी शक्ति से अनेक मायावी रूप धारण कर लेता है। उपनिष्द में ब्रह्मा को रचनात्मक शक्ति माना गया है। ब्रह्मा इसी शक्ति के द्वारा वेदों, ऋतुओं, पदार्थों और संसार की सृष्टि करता है। आचार्य शंकर ने माया को 'भ्रमरूप' कहा है। माया की काफी चर्चा हमारे प्राचीनकाल ग्रन्थों में उनका प्रभाव हमारे दर्शनो पर भी पड़ा अतः माया एक प्रकार का आवरण है जो आत्मा व परमात्मा के मध्य पर्दा डालकर उसे सांसारिक कर्मो में प्रवृत करती है।

मोक्ष :– मानव जीवन के चार पुरूषार्थ माने जाते है – धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। इन चारों में मोक्ष ही मानव जीवन का परम लक्ष्य है। मोक्ष का अर्थ सांसारिक बंधनों से मुक्ति पाना है। या जीवन रूप चक्र से मुक्ति पाना मोक्ष है। विशिष्टाद्वैतवाद के अनुसार भक्ति का उदय ही मुक्ति है। न्याय दर्शन व सांख्य दर्शन में मोक्ष को 'अपवर्ग तथा योगदर्शन में मोक्ष को 'कैवल्य' के नाम से जाना जाता है।

[6]डॉ॰ विश्वम्भरदयाल अवस्थी, गोस्वामी तुलसीदास, दर्शन और भक्ति, पृ॰ 57